संतमार्गी या ज्ञानमार्गी काव्यधारा की प्रमुख विशेषता

**डॉ. कृष्ण कुमार पासवान**

**सहायक प्राध्यापक**

**हिंदी विभाग**

**राम चरित्र सिंह महाविद्यालय**

**मंझौल, बेगुसराय**

**सम्पर्क :** **ksoni.hindi@gmail.com**

संत काव्यधारा निर्गुण काव्याश्रयी काव्यधरा है। इस धारा के प्रमुख कवि कबीर हैं तथा रैदास, दादूदयाल, मलूकदास, सुन्दरदास, गुरुनानक आदि अन्य प्रमुख कवि **विशेषताएं** हैं।

1. आत्मविश्वास की प्रबलता :-

 संत कवि प्राय: निरक्षर थे। उन्होंने विभिन्न संप्रदायों के प्रतिपादित सिद्धांतों को सुना था किंतु वे स्वयं शास्त्रों को पढ़ने वाले नहीं थे। अत: शास्त्रों से उनपर जो किए थे वे उनसे प्रभावित नहीं हुए। उन्होंने शंकराचार्य, वैष्णव व सूफी कवियों और नाथ योगियों आदि की परंपरा से स्वयं को अच्छे लगने वाले विचारों को ग्रहण किया, इससे उनमें अपार आत्मविश्वास की भावना आर्इ और निडर होकर वे स्वानुभूतियों को अभिव्यक्त कर सके। कबीर इसमें प्रमुख रहे।

**2. सद्गुरु का महत्व :-**

 संतकाव्य में ब्रह्म निर्गुण है, जिसे जानने के लिए गुरु का महत्व प्रतिपादित किया गया है। उस र्इश्वर से ऊंचा स्थान दिया गया है क्योंकि र्इश्वर को प्राप्त करने का मार्ग दिखाने वाले गुरु ही है। गुरु का महत्व सगुण भक्ति धारा में भी स्वीकार किया गया है। मीरा ने भी अपने गुरु की वंदना की है। कबीर कहते हैं कि -

 ‘गुरु गोविंद दोऊ खड़े, काके लागूं पांय।

 बलिहारी गुरु आपने, जिन गोविंद दियो मिलाय।।

3. निर्गुण ब्रह्म के प्रति आस्था :-

 संत कवियों का ब्रह्म निर्गुण, निराकार व अमूर्त है। इनका लक्ष्य निर्गुण ब्रह्म की प्राप्ति है यद्यपि इन्होंने उसे प्राप्त करने के लिए सगुण साधनों का प्रयोग किया है। कबीर के यहां भी कभी-कभी ‘निर्गुण ब्रह्म’ या ‘हरि’ का नाम धारण कर लेते है और उनकी भक्तिपूर्ण भावना का आधार बन जाते हैं। किंतु जल्दी ही से फिर अमूर्त के पक्षधर हो जाते हैं -

 ‘दशरथ सुत तिहुं लोक बखाना,

 राम नाम का मर्म है आना।’

**4. माया का विरोध :-**

 इनका मानना है कि माया भ्रम व इच्छा पैदा करके व्यक्ति को उलझा देती है और उसे मोक्ष प्राप्ति की ओर अग्रसर नहीं होने देती। नारी को उन्होंने सबसे बड़ी माया माना है। नारी संबंधी दृष्टिकोण इन कवियों की सीमा प्रतीत होती है यद्यपि तुलसी जैसे सगुण भक्ति धारा के कवि भी इस सीमा को तोड़ नहीं सके।

 ‘नारी नसावैन तीन सुख, जो नर पासै दोर्इ।

 भक्ति, मुक्ति, निजज्ञान में, पैस सके नहीं कोर्इ।।’

**5. शास्त्रों का विरोध :-**

 प्राय: संत कवि निरक्षर थे, कागद और मसि को न छू सकने के कारण तथा निम्न वर्ग से होने के कारण उन्होने शास्त्रों का अध्ययन नहीं किया था। वे शास्त्रों के प्रति समर्पित होने वाले व्यक्तियों को विवेकशून्य मानते थे -

 ‘पोथी पढ़ि-पढ़ि जग मुआ पण्डित भया न कोय।

 ढार्इ आखर प्रेम का पढ़े सो पण्डित होय।।’

**6. आडंबरों का विरोध :-**

 कबीर ने अपने व्यंग्य प्रहारों से मौलवियों और पंडितों दोनों पर जम कर चोट किया। इनके व्यंग्य में जो पैनापन व गंभीरता है वह अन्यत्र दुर्लभ है। कबीर की व्यंग्यात्मकता की प्रशंसा आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने भी की है।

 कांकर पाथर जोर के, मस्जद लर्इ बनाय।

 तां चढ़ि मुल्ला बांग दे, क्या बहरा हुआ खुदाय।।’

 संतों ने हिंदू संप्रदाय में आर्इ हुर्इ रूढ़िगत विकृतियों का जमकर विरोध किया। मूर्ति पूजा, धार्मिक हिंसा, रोजा-व्रत, तीर्थ-हज आदि आडंबरों की आलोचना की।

 ‘पाथर पूजे हरि मिले, तो मैं पूजूं पहार।

 तां ते तो चाकी भली, पीस खाय संसार।।’

उन्होंने शास्त्रों को बंधन का प्रतीक माना है जो परिवर्तनशील परिस्थितियों के शाश्वत समाधान प्रस्तुत नहीं कर सकते।

**7. सामाजिक असमानताओं का विरोध :-**

 सभी संत कवियों ने सामाजिक भेद-भाव के दंश को झोला था इसलिए उन्होंने उन सामाजिक विषयताओं का विरोध किया जो ताक्रिक नहीं है और मानव के शोषण हेतु जबरदस्ती पैदा की गर्इ है। उन्होंने वर्ण व्यवस्था को उसकी अमानवीयता के कारण अपनी कटु आलोचना का विषय बनाया -

 ‘जाति पाति पूछे नहीं कोर्इ।

 हरि को भजे सो हरि का होर्इ।।’

इसलिए संत कवियों ने शास्त्रों का विरोध किया है क्योंकि शास्त्र उनके लिए अभिजात्यता का प्रतीक है एवं सामाजिक व्यवस्था में भेद-भाव को जन्म देते हैं। इतना प्रखर विरोध बाद के साहित्य में नहीं देखा गया जितना भक्तिकाल में।

शिल्पगत विशेषताएं :-

**1**. भाषा **:-** **संत कवि मूलत: भक्त हैं और कवि बाद में है। इन्होंने र्इमानदारी के साथ सीधे-सीधे अपने कथनों को अभिव्यक्त किया है। स्वयं को श्रेष्ठ कवि साबित करना इनका उद्देश्य कभी नहीं था। ये घुमक्कड़ प्रवृत्ति के थे। जगज-जगह जा कर उपदेश देना इनका स्वभाव था। अत: इनकी भाषा में भिन्न-भिन्न स्थानों के शब्द जुड़ गए। इन्होंने अनेक संप्रदायों के मतों को ग्रहण किया इसीलिए उन्हीं प्रतीकों का प्रयोग भी स्वाभाविक रूप में किया। इनकी भक्ति भी निराकार ब्रह्म के प्रति थी। इन सबका प्रभाव, इनकी भाषा पर पड़ा और स्वभावत: इनकी भाषा ‘सधुक्कड़ी’ हो गर्इ। इनकी भाषा में ब्रज, राजस्थानी, पंजाबी, अरबी, फारसी आदि भाषाओं के शब्दों का प्रयोग हुआ। इनकी भाषा में आभिजात्यता लक्षित नहीं होती वरन् उसमें आम आदमी द्वारा प्रयुक्त होने वाली भाषा का खुरदरापन और कठोरता है। यह अलंकारों व शब्दों के चमत्कारों के फेर में न पड़ने वाली जीवंत भाषा है। इसी अभिव्यक्ति पूर्ण भाषा के प्रयोग के आधार पर आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कबीर को ‘वाणी का डिक्टेटर’ कहा है।**

**2.** उलटबांसी **:- हठयोग के प्रभाव के कारण इनकी भाषा में उलटबांसियों का प्रयोग हुआ है। उन्हें समझने हेतु उनकी प्रतीकात्मक शब्दावली को सुलझाना आवश्यक है।**

 ‘नैय्या विच नदिया डूबती जाए’

 (आखें) (जीवन)

**3. काव्य रूप :- संतों का सारा साहित्य मुक्तरों के रूप में उपलब्ध है। जिस अमूर्त की चर्चा उन्होंने की और जिस अन्त: साधनात्मक अनुभतियों को वे अभिव्यक्त करना चाहते थे उसके लिए मुक्तर शैली ही उपयुक्त थी।**

**4.** छंद **:-** **निर्गुण संतों ने दोहा, सबद, रमैनी, फाग आदि छंदों में रचनाएं लिखीं।**

(समाप्त)